चक्की के गीत और संगठन

तारा उभे-कुसुम सोनावाने

हमने अपना जागरूकता कार्यक्रम कुछ साल पहले शुरू किया था। इन सालों के अनुभवों से हमने बहुत कुछ सीखा है। शुरू में औरतों के करीब आने, उन्हें अपनी ईमानदारी का भरोसा दिलाने के लिए कई तरीके इस्तेमाल करने पड़े। ऐसे तरीक़े जो उन देहाती औरतों के जीवन का हिस्सा हों। ग्रामीण इलाकों में औरतें काम करते हुए हमेशा गाती हैं। चक्की पीसते हुए, धान रोपते हुए, सूत कातते हुए, लकड़ी का गट्ठर उठाकर जंगल से लौटते हुए वे गीत गाती हैं। मेहनत से भरा, नीरस उबाऊ काम है चक्की पर अनाज पीसना। उसी नीरसता को दूर करते हैं चक्की गीत। जिनमें औरतें अपने दुख-सुख, शिकवे शिकायतें शब्दों में पिरो देती हैं।

संगठन

हम सभी इन गीतों से वाकिफ़ थीं। पुणे ज़िले के देहातों में जहां हम काम कर रही थीं इन गीतों ने हमारा बड़ा साथ दिया। मिसाल के लिए एक गांव में औरतों की एक बैठक बुलाई। औरतों ने कहा कि बैठक दस बजे रात तक खत्म हो जानी चाहिए, क्योंकि वे दिन भर के बाद काफ़ी थकी होती हैं। बैठक के दौरान हममें से एक ने एक चक्की गीत गाया। जिसमें वही मुद्दा उठाया गया था जिस पर हम बात करना चाहती थीं।

नन्ही कच्ची सुपारी बले
भारी अगन के बीच जले
लड़की के काम को कभी
नहीं कोई मान मिले

अपने घर या ससुराल रहे
लपटों के बीच हरियाली जले
चाहे कहीं भी जाए महरिया
बस कर करके काम मरे।

बैठक भोर तक चलती रही। सहभागियों ने कहा "तुमने हमारे गीत गाना शुरू कर दिया तो हमें पता ही नहीं चला कि समय कब बीत गया।"

एक और गांव में औरतें एक घर में इकट्ठा हुईं। जहां बरामदा बड़ा था और 40 से 50 औरतें बैठ सकती थीं। घर की मालकिन ने कहा कि "कहीं और बैठो, मुझे सुबह जल्दी उठना पड़ता है" बैठक में न आने के लिए भी उसने यही कारण बताया। हम दूसरे घर में जा बैठीं और चर्चा शुरू की। चर्चा के दौरान हमने कुछ चक्की गीत गाए।

माता पिता कहें–
बेटी, हम तोहे जहां दिए
ओही, जगह मरियो
लकड़ी जले तो
चूल्हे मां ही जले
ससुरात में सब सहियो
सह लेगी तो का होगा?
सह लेगी तो का होगा?
तोहे देवपन मिलियो।

हमेशा की तरह सभी औरतें साथ देने लगीं। बैठक में जान पड़ गई। सुबह, बैठक में न आने वाली औरत आकर बोली "मुझे तुम लोगों का अपमान नहीं करना चाहिए था। मैं अपने घर में सब सुनती रही। मुझे विश्वास हो गया है कि इस काम से गांव का भला होगा।"

सामाजीकरण

एक और गांव में बैठक चल रही थी। कुछ लड़कियों ने झांका और धीरे से भीतर आ गईं। बड़ी औरतों ने डांट लगाई और उन्हें भगाने लगीं। हमें एक चक्की गीत याद आ गया।

लड़की बन जन्मी
कितनी है चुलबुली
दया मांगे धरती
धीरे चल पगली

हमने यह गीत गाकर कहा "हमें लड़कियों को दबाना सिखाया जाता है। अपनी बैठक में हमें इसके पीछे के कारणों को ढूंढना होगा।"

हमने इस मुद्दे पर चर्चा ज़ारी रखी जिसमें सभी औरतों ने खूब बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। हमने आम रीति रिवाजों पर सवाल उठाए। औरतों को ये चर्चाएं पसन्द आईं। उन्हें हमारा तरीका भी अच्छा लगा। इस तरह हमारा आपसी सम्पर्क बना हुआ है। एक और गीत का भी हमने इस्तेमाल किया–

किस मूरख ने बनाया ये रिवाज
या तो पिता घर या ससुराल
औरत की ज़िन्दगी के यही दो घाट
तुलसी का पौधा, भगवान के द्वार पर।
बैल की तरह खूंटे उम्र भर
ऐसी है ज़िन्दगी, जो ये जानती
न जन्मती लड़की बन, बन जाती
तुलसी का पौधा, भगवान के द्वार पर।

इन गीतों से अपने आप सवाल निकलते हैं। हम अपने ही जन्म पर क्यों पछताती हैं? ये समाज हमसे एक नए घर में बैल की तरह खटने के लिए कैसे कहता है? हमारी ज़िन्दगी का हम क्या करें? गीत गाए जाते हैं, सवाल उठते हैं, औरतें सोचती

हैं और ताज्जुब करती हैं कि इन गीतों में तो उनकी अपनी कहानियां हैं। कहती हैं—"सच में हमने तो इन गीतों को इस रूप में कभी देखा ही नहीं। इनसे हमें अपने हालात समझने में मदद मिलती है।

हम बैठकों में औरतों से कहती हैं:—

ये चक्की का पत्थर नहीं
पहाड़ों का साधू है
सच कहती हूं ओ सहेली
खोल दे अपना दिल इसके सामने

औरतें आज तक चक्की के पत्थर के सामने अपना दिल खोलती आई हैं, परन्तु अब हाथ की चक्कियों की जगह बिजली की मशीनें आ गई हैं। इसलिए हमें अपना दिल खोलने के लिए और जगहें ढूंढनी होंगी। हमारे सामने कई सवाल हैं। ऐसी बैठकों में ही हमें सवालों के जवाब मिलेंगे और दिल खोलने के लिए जगह भी। □

अनुवाद—वीणा शिवपुरी
साभार...माध्यम

आओ बहना मिलजुल गाएं
जीवन का हर भेद मिटाएं।